[2012] 5 एस.सी.आर. 1

जय प्रकाश सिंह

बनाम

बिहार राज्य एवं अन्य आदि

(आपराधिक अपील संख्या 525-526/2012)

14 मार्च, 2012

[डॉ. बी.एस. चौहान एवं जगदीश सिंह खेहर, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 अग्रिम जमानत-तथ्यों के अधार पर धारा 12 के तहत अपराध करने के लिए प्रतिवादी के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की गई। धारा 302/34 आईपी सी के तहत अपराध धअना के समय से दो धंटे के भीतर प्राथमिकी दर्ज की गइ्र थी- मृतक को कई खरोंचे आई आरैर बंदूरक की पॉच गोली लगी-पक्षों के बीच एक मजबूत मकसद था-उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को अग्रिम जमानत रिहा कर दिया - स्थिरता अग्रिम जमानत केवल असाधारण परिस्थितियों में दी जा सकती है जहॉ अदालत का प्रथम दृष्टया यह विचार हे कि आवेदक को अपराध में गलत तरीके से फंसाया गया हे और वह अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करेगा उच्च न्यायालय ने अग्रिम जमानत देने के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किसी भी पैरामीटर को लागू नहीं किया और इसके बजाय एक बहुत ही गंभीर मामले को अनौपचारिक और लापरवाह तरीके से निपटाया। उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता पर विचार करते हुए अपने असाधारण क्षेत्राध्किार का प्रयोग करना चाहिए था और चूॅकि प्राथमिकी सहज रुप से दर्ज की गई थी, इसकी सत्यता विश्वसनीय है। उच्च न्यायालय ने इस बात पर विचार नहीं किया कि क्या हिरासत में पूछताछ की आवश्यकता थी और इस बात पर कोई कारण दर्ज नहीं किया कि

वैधानिक प्रावधान में शामिल पूर्व अपेक्षित शर्त कैसे पूरी हो गई 438 में दिए गए आधारों के बावजूद है। इस प्रकार उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश निरस्त किए जाते है।

प्राथमिकी दाखिल करने में तत्परता अभियोजन पक्ष के मामले पर प्रभाव का उद्देश्य- बताया गया।

प्रतिवादियों के खिलाफ धारा 302/34 आईपीसी के तहत अपराध करने का आरोप लगाते हुए प्राथमिकी दर्ज की गई थी। आरोप है कि प्रतिवादियों ने मृतक पर अंधाधुंध फायरिंग की। मृतक के शरीर पर 5 गोलियां लगीं, जिससे उसकी मौके पर ही मौत हो गई। 10-15 दिन पहले प्रतिवादियों ने शिकायतकर्ता को पुराने विवाद के चलते उसे और उसके भाई को जान से मारने की धमकी दी थी। प्रतिवादियों ने अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया था। सत्र न्यायाधीश ने इसे खारिज कर दिया। हालांकि, उच्च न्यायालय ने प्रतिवादियों को धारा 438 सीआरपीसी के तहत अग्रिम जमानत पर रिहा कर दिया। इसलिए, अपीलकर्ताओं ने तत्काल अपील दायर की।

अपीलों का निपटारा करते हुए न्यायालय ने

कहा: 1.1 घटना के समय से दो घंटे की अवधि के भीतर ही प्राथमिकी दर्ज कर ली गई थी। प्राथमिकी दर्ज करने में तत्परता से सूचनादाता/शिकायतकर्ता द्वारा दिए गए बयान की सत्यता का आश्वासन मिलता है। तत्काल दर्ज की गई प्राथमिकी से यह पता चलता है कि वास्तव में क्या हुआ है और संबंधित अपराध के लिए कौन जिम्मेदार है। आपराधिक मामले में प्राथमिकी एक महत्वपूर्ण और मूल्यवान साक्ष्य है, हालांकि यह ठोस साक्ष्य नहीं हो सकता है। किसी अपराध के संबंध में प्राथमिकी को तुरंत दर्ज करने पर जोर देने का उद्देश्य उन परिस्थितियों के बारे में प्रारंभिक जानकारी प्राप्त करना है जिनमें अपराध किया गया था, वास्तविक अपराधियों के नाम और उनकी भूमिका के साथ-साथ घटनास्थल पर मौजूद प्रत्यक्षदर्शियों के नाम। यदि एफआईआर दर्ज करने में देरी होती है, तो यह सहजता का लाभ

खो देता है, बड़ी संख्या में परामर्श/विचार-विमर्श के परिणामस्वरूप जी अतिरंजित तथ्य, अतिरंजित विवरण या मनगढ़ंत कहानी पेश करने का खतरा बढ़ जाता है। [पैरा 11 और 12] [10-बी-ई]

थुलिया काली बनाम तमिलनाडु राज्य **एआईआर 1973 एससी 501: H 1972 (3) एससीआर 622;** पंजाब राज्य बनाम सुरजा राम **एआईआर 1995 एससी 2413: 1995 (2) सप्लीमेंट एससीआर 590;** गिरीश यादव और अन्य ए बनाम मध्य प्रदेश राज्य **(1996) 8 एससीसी 186:1996 (3) एससीआर 1021;** तकदीर समसुद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य और अन्य **एआईआर 2012 एससी 37 पर भरोसा किया गया।**

1.2 जहां तक मामले की समीक्षा का सवाल है कि जमानत दी जानी चाहिए या नहीं, धारा 438 और 439 सीआरपीसी के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है। हालांकि, नियम के तौर पर न तो अग्रिम जमानत दी जा सकती है और न ही नियमित जमानत। अग्रिम जमानत एक असाधारण विशेषाधिकार है, इसलिए इसे केवल असाधारण मामलों में ही दिया जाना चाहिए। न्यायालय को प्रदत्त न्यायिक विवेक का उचित ढंग से प्रयोग किया जाना चाहिए, ताकि यह निर्णय लिया जा सके कि यह अग्रिम जमानत दिए जाने के लिए उपयुक्त मामला है या नहीं। [पैरा 13] [10-जी-एच; 11-ए]

मध्य प्रदेश राज्य और अन्य बनाम राम किशन बलोथिया और अन्य **एआईआर 1995 एससी 198: 1995 (1) एससीआर 897;** सिद्धराम सतलिंगप्पा म्हेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य **एआईआर 2011 एससी 312: 2010 (15) एससीआर 201;** करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य (1994) 3 एससीसी 569; नारकोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो बनाम दिलीप ई प्रहलाद नामडे **(2004) 3 एससीसी 619: 2004 (3) एससीआर 92- संदर्भित।**

1.3 गंभीर अपराध में अग्रिम जमानत देने के लिए मापदंडों को पूरा किया जाना आवश्यक है और इसके अलावा ऐसी राहत देते समय, न्यायालय को इसके कारणों को दर्ज

करना चाहिए। अग्रिम जमानत केवल असाधारण परिस्थितियों में दी जा सकती है, जहां न्यायालय का प्रथम दृष्टया यह विचार हो कि आवेदक को अपराध में गलत तरीके से फंसाया गया है और वह अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करेगा। [पैरा 18] [14-बी-सी]

डी.के. गणेश बाबू बनाम पी.टी. मनोकरण एवं अन्य **(2007) 4** एससीसी 434; 2007 (3) एससीआर 1; महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य बनाम मोहम्मद साजिद हुसैन मोहम्मद एस हुसैन एवं अन्य **(2008) 1 एससीसी 213: 2007 (10) एससीआर 995;** भारत संघ बनाम पदम नारायण अग्रवाल एवं अन्य। **(2008) 13 एससीसी 305: 2007 (3) एससीआर 1 पर भरोसा किया गया।**

1.4 उच्च न्यायालय ने सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किसी भी उक्त मापदंड को लागू नहीं किया, बल्कि एक बहुत ही गंभीर मामले को बहुत ही लापरवाही और अनौपचारिक तरीके से निपटाया और अभियुक्त के प्रति अनुचित और अनुचित सहानुभूति दिखाई। उच्च न्यायालय ने मामले पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार न करके गलती की और उक्त आवेदनों को इस आधार पर स्वीकार कर लिया कि प्राथमिकी में कुछ पुराने विवादों का उल्लेख किया गया था और अभियुक्त का उचित पूर्ववृत्त था। [पैरा 19 और 20] [14-डी-एफ]

1.5 मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, यह अग्रिम जमानत देने के लिए उपयुक्त मामला नहीं था। उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता पर विचार करते हुए उपरोक्त मापदंडों का पालन करते हुए अपने असाधारण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना चाहिए था और चूंकि प्राथमिकी स्वतःस्फूर्त रूप से दर्ज की गई थी, इसलिए इसकी सत्यता विश्वसनीय है। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को बहुत हल्के में लिया कि प्राथमिकी स्वतःस्फूर्त दर्ज की गई थी और आगे कोई कारण दर्ज नहीं किया कि वैधानिक प्रावधान में शामिल पूर्व-आवश्यक शर्तें कैसे पूरी हुईं। न ही न्यायालय ने इस बात पर विचार किया कि हिरासत में पूछताछ की आवश्यकता थी या नहीं। न्यायालय कानून के स्थापित सिद्धांतों के

उल्लंघन में अपने विवेक का प्रयोग नहीं कर सकता, बल्कि उसे उनका सख्ती से पालन करना चाहिए। विवेक कानून द्वारा निर्देशित होना चाहिए; नियम द्वारा शासित होना चाहिए और मनमाना, काल्पनिक या अस्पष्ट नहीं होना चाहिए। न्यायालय को अनियमित परोपकार के लिए अस्थिर भावना के आगे झुकना नहीं चाहिए। यह आदेश धारा 438 सीआरपीसी में दिए गए आधारों का उल्लंघन करता है। वह स्वयं विवेक के गैर-प्रयोग से ग्रस्त है और इसलिए, कानून की दृष्टि में उसे बनाए नहीं रखा जा सकता। [पैरा 21] [14-एच; 15-ए-डी]

1.6 उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश अपास्त किए जाते हैं। उक्त प्रतिवादियों को दी गई अग्रिम जमानत रद्द की जाती है। [पैरा 22] [15-ई]

मामला कानून संदर्भ

1972 (3) एससीआर 622	भरोसा किया गया	पैरा-12
1995 (2) अनुपूरक एससीआर 590	भरोसा किया गया	पैरा-12
1996 (3) एससीआर 1021	भरोसा किया गया	पैरा-12
एआईआर 2012 एससी 37	भरोसा किया गया	पैरा-12
1995 (1) एससीआर 897	संदर्भित	पैरा-14
2010 (15) एससीआर 201	संदर्भित	पैरा-16
2004 (3) एससीआर 92	संदर्भित	पैरा-16
(1994) 3 एससीसी 569	संदर्भित	पैरा-16
2007 (3) एससीआर 1	भरोसा किया गया	पैरा-18
2007 (10) एससीआर 995	भरोसा किया गया	पैरा-18

2007 (3) एससीआर 1 भरोसा किया गया पैरा-18

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं. 525-526/2012 पर आधारित

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 19.9.2011 और 25.10.2011 के आपराधिक विविध संख्या 2011 की 28318 और 33546 के निर्णय और आदेश से।

अपीलकर्ता की ओर से द्विजेंद्र कुमार पांडे, अमित पवन।

प्रतिवादी की ओर से गोपाल सिंह, प्रेरणा सिंह, कविता झा, राजीव कुमार झा, एस.पी. शर्मा।

न्यायालय का निर्णय **डॉ. बी.एस. चौहान, न्यायमूर्ति** द्वारा सुनाया गया।

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. इन आपराधिक अपीलों को 2011 के अपराधिक विविध संख्या 28318 और 33546 में पटना उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार द्वारा दिनांक 19.9.2011 और 25.10.2011 को पारित निर्णयों और आदेशों के खिलाफ दायर किया गया है। .जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 (जिसे इसके बाद 'दंड प्रक्रिया संहिता' कहा गया है) के तहत प्रत्यर्थी राजेश कुमार सिंह उर्फ पप्पू सिंह और संजय कुमार सिंह उर्फ मिंटू सिंह के अग्रिम जमानत पर रिहा कर दिया है।

3. इन अपीलों को जन्म देने वाले तथ्य और परिस्थितियाँ ये हैं किः

ए. 5-6-2011 को, अपीलार्थी जय प्रकाश सिंह ने भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302/34 (जिसे इसमें इसके बाद 'आई. पी. सी.' के रूप में संदर्भित किया गया है) के तहत 2011 के लहेरिया सराय मामला संख्या 304 में प्राथमिकी दर्ज की, जिसमें आरोप लगाया गया कि मुखबिर/शिकायतकर्ता और उसके बड़े भाई शिव प्रकाश सिंह की पिछले 2-3 वर्षों से

एक दवा की दुकान थी। 05.06.2011 को लगभग 01:00 बजे, अपराह्न उसके भाई ने दुकान बंद कर दी और अपनी मोटरसाइकिल पर अपने घर की ओर बढ़ गया। मोटरसाइकिल पर सवार उपरोक्त उत्तरदाताओं ने उनका पीछा किया और उन्हें रोक दिया। उन्होंने अंधाधुंध गोलीबारी शुरू कर दी और इस तरह उनकी मौके पर ही मौत हो गई। प्राथमिकी में यह भी आरोप लगाया गया था कि कथित प्रतिवादियों ने शिकायतकर्ता को 10-15 दिन पहले जान से मारने की धमकी दी थी क्योंकि दोनों पक्षों के बीच लेन-देन का कुछ पुराना विवाद था।

बी. पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट के अनुसार, मृतक व्यक्ति को 5 गोलियां लगी थीं और उसी के कारण उसकी मृत्यु हो गई थी। उक्त प्रत्यर्थियों ने अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया था, हालांकि, उनके आवेदन विद्वत सत्र न्यायाधीश द्वारा 11.8.2011 के आदेश द्वारा खारिज कर दिए गए थे, जिसमें कहा गया था कि जांच में, कथित प्रत्यर्थियों के खिलाफ एक मजबूत उद्देश्य पाया गया था और इस आशय के चश्मदीद गवाहों के कुछ हलफनामे थे कि कथित प्रत्यर्थी हमलावर थे.

सी. पीड़ित, उक्त प्रत्यर्थियों ने पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत की मंजूरी के लिए विविध आपराधिक याचिकाएं दायर की। कथित आवेदनों को उन्हें अग्रिम जमानत देने वाले आक्षेपित आदेश इस आधार पर पारित करने की अनुमति दी गई है कि एफआईआर ने स्वयं यह स्पष्ट कर दिया है कि पक्षकारों के बीच कुछ पूर्व विवाद था जिसके कारण झगड़ा हुआ था और अभियुक्त का पूर्व चरित्र काफी अच्छा है।

इसलिए, ये अपीलें।

4. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री द्विजेन्द्र कुमार पांडेय ने प्रस्तुत किया है कि उच्च न्यायालय ने अपराध की गंभीरता और अपराध किए जाने के तरीके पर विचार किए बिना और यह महसूस किए बिना कि घटना के दो घंटे की अवधि के

भीतर तुरंत प्राथमिकी दर्ज की गई थी और उसमें दोनों कथित अभियुक्त व्यक्तियों के नाम थे, उक्त प्रत्यर्थियों को अग्रिम जमानत देते समय गंभीर त्रुटियां की थी। इस प्रकार, आक्षेपित निर्णय और आदेश को निरस्त किया जाए।

5. इसके विपरीत, सुश्री कविता झा और सुश्री प्रेरणा सिंह, कथित प्रत्यर्थियों और बिहार राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क देते हुए अपीलों का विरोध किया है कि उच्च न्यायालय ने अग्रिम जमानत देते समय बहुत गंभीर शर्तें लगाई हैं। आदेश में इस स्तर पर किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। अपीलों में कोई योग्यता नहीं है और इन्हें खारिज किया जा सकता है।

6. हमने पक्षों की ओर से पेश विद्वान वकील द्वारा की गई प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार किया है और रिकॉर्ड का अध्ययन किया है।

7. धारा 438 Cr.P.C के प्रावधान अग्रिम जमानत आवेदन पर विचार करने के लिए दिशानिर्देश निर्धारित करते हैं, जो निम्नानुसार हैः

"438. गिरफ्तारी की आशंका वाले व्यक्ति को जमानत देने का निर्देश। -(1) जहां किसी व्यक्ति के पास यह विश्वास करने का कारण है कि उसे गैर-जमानती अपराध करने के आरोप में गिरफ्तार किया जा सकता है, वह इस धारा के तहत निर्देश के लिए उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि ऐसी गिरफ्तारी की स्थिति में उसे जमानत पर रिहा किया जाएगा और वह न्यायालय, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखते हुए, अर्थात्ः-

(i) आरोप पत्र की प्रकृति और गंभीरता

(ii) आवेदक का पूर्ववृत्त जिसके अंतर्गत यह तथ्य भी है कि क्या उसने पहले किसी संज्ञेय अपराध के संबंध में न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि पर कारावास भोगा है

(iii) आवेदक के न्याय से भागने की संभावना; और

(iv) जहां आरोपित आवेदक को इस प्रकार गिरफ्तार करके उसे आहत करने या अपमानित करने के उद्देश्य से लगाया गया है, वहां या तो आवेदन को तुरंत अस्वीकार कर दें या अग्रिम जमानत की मंजूरी के लिए अंतरिम आदेश जारी करें। "

8. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, आरोप की प्रकृति और गंभीरता सहित अग्रिम जमानत की मंजूरी के लिए पूर्व अपेक्षित शर्तों का अनुपालन सुनिश्चित करना न्यायालय की ओर से आज्ञापक है।

9. माना जा सकता है कि मृतक को बंदूक की गोली से कई चोटें आई थीं। पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट के अनुसार, मृतक व्यक्ति पर निम्नलिखित चोटें पाई गईंः

“ए. खरोचः(1) 1 1/4" x1/4" 1"- माथे का दाया भाग में, (2) 1/4" x 1/4" 1/2 "x 1/4" और 1/2" x 1/10" निचले हिस्से में 1/2" निचले बाएं पैर (3) 1/4" x l/4" दाएं घुटने में

बी. अग्नेयास्त्रों की चोटें (1) उल्टे कटे हुए मार्जिन और खरोंच के साथ 1/4 व्यास का प्रवेश घाव। दाहिने हाथ के बाहरी पहलू पर रखा गया कॉलर-2 कोहनी के लिए प्रोक्सिकल-पारित हाथों से हड्डी को तोड़कर टुकड़े-टुकड़े किया जाता है और बाहर निकलने झत-विक्षत घाव 1/3" x 1/9" के साथ हाथ के मध्य और आंतरिक हिस्से में भी। एक अन्य प्रविष्टि घाव, 1/5" जिसमें खरोंच कॉलर, उल्टा मार्जिन और चारों ओर गोदना (1/2" x 1-1/2") था, भी प्रवेश को रोकने वाले घाव के 1" 'दूर' में मौजूद था और उसी निकास घाव से बाहर निकल रहा था।

(2) प्रवेश घाव-1/4 उल्टे कटे मार्जिन के साथ दाहिने पूर्वकाल अक्षीय रेखा में एक खरोंच कॉलर निप्पल के 5" नीचे-दाहिनी ओर 8 वीं इंटरकॉर्टल स्पेस-यकृत का दाहिनी

ओर का लोब-प्रवेश एक ही स्थान पर छोटी आंत-बाहर निकलने का धाव 1/3" व्यॉस के माध्यम से बाहर निकला।

(3) प्रवेश धाव 1/4" व्यास का उलझा हआ उल्टा मार्जिन और बाएँ इलियाक फोसा में स्थित खरोच कालर एक स्थान पर रंग एक स्थान पर छोटी आंत बाहर निकला यह निकास दाहिने पेट के किनारे पर उल्टे मार्जिन के साथ, अग्रिम ओसिलरी लाइन के निप्पल में 9" नीचे ¾" x 1/2" होगा।

(4) हाथ के ऊपरी और भीतरी हिस्से के ऊपर और भीतरी हिस्से के ऊपर खरोंच कॉलर और हाथ के बांयी और नरम ऊतक के साथ 1/3" के बाहर निकलने के घाव के माध्यम से बाहर आने के लिए एक 1/3" प्रवेश घाव। बांए हाथ की 3" उपर (समीपस्थ) कोहनी

(5) प्रवेश घाव 1/4 "व्यास में पेट के पीछे 4" बाहरी से टी12 स्तर पर मध्य रेखा तक, उल्टे और मर्दित किनारों के साथ और एक स्थान पर खरोच कॉलर क्षेत्रपेशी बड़ी आंत हाथ में उल्टे किनारे के साथ 1/4" व्यास के घाव से बाहर निकलती है।

पटरियों के साथ, ऊतक क्षत-विक्षत थे। पेट की गुहा के अंदर लगभग 1000 सीसी मात्रा में तरल रक्त के लाल थक्के देखे गए। अंग पीला दिखाई दिया। हृदय के दोनों हिस्से आंशिक रूप से भरा हुआ था और मूत्राशय भरा हुआ पाया गया था। पेट में लगभग 20 सीसी भोजन बिना मादक गंध के थाखोपड़ी और मस्तिष्क ने कुछ विशेष नहीं दिखा।

राय में मृत्यु रक्तस्राव से हुई और दोनों उपर वर्णित आग्नेयास्त्रों की चोटों के कारण हुई। "

10. विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अग्रिम जमानत देना उचित नहीं समझा, बल्कि उक्त अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से की गई दलीलों पर विचार करने के बाद इसे खारिज कर दिया, यह देखते हुए कि अदालत ने केस डायरी का अध्ययन किया था, जिसके पैरा 90 से एक बहुत ही मजबूत उद्देश्य का पता चलता है। केस डायरी में उक्त आरोपी के खिलाफ सामग्री थी। मृतक पर बंदूक की गोली के 5 चोट के घाव मिले थे। इस प्रकार, आरोपी को अग्रिम जमानत पर रिहा करने के लिए एक उपयुक्त मामला नहीं था।

11. यह स्वीकार किया जाता है कि आधी रात को घटना के समय से दो घंटे की अवधि के भीतर तुरंत प्राथमिकी दर्ज की गई थी। प्राथमिकी दर्ज करने में शीघ्रता सूचना देने वाले/शिकायतकर्ता द्वारा दिए गए संस्करण की सत्यता का कुछ आश्वासन देती है।

12. आपराधिक मामले में प्राथमिकी एक महत्वपूर्ण और मूल्यवान साक्ष्य है, हालांकि यह साक्ष्य का मूल हिस्सा नहीं हो सकता है। अपराध के संबंध में शीघ्र प्राथमिकी दर्ज करने पर जोर देने का उद्देश्य उन परिस्थितियों के बारे में शीघ्र जानकारी प्राप्त करना है जिनमें अपराध किया गया था, वास्तविक दोषियों के नाम और उनके द्वारा निभाई गई भूमिका के साथ-साथ घटना स्थल पर मौजूद चश्मदीद गवाहों के नाम। यदि प्राथमिकी दर्ज करने में देरी होती है, तो यह सहजता का लाभ खो देता है, बड़ी संख्या में परामर्श/विचार-विमर्श के परिणामस्वरूप रंगीन संस्करण, अतिरंजित विवरण या मनगढ़ंत कहानी की शुरुआत का खतरा बढ़ जाता है। निस्संदेह, प्राथमिकी दर्ज करने में जल्दबाज़ी सूचना देने वाले के बयान की सच्चाई के बारे में एक आश्वासन है। तुरंत दर्ज की गई प्राथमिकी से पता चलता है कि वास्तव में क्या हुआ है और सवाल उठता है कि इस अपराध के लिए कौन जिम्मेदार है। (देखें- **थुलिया काली बनाम तमिलनाडु राज्य,** ए. आई. आर. 1973 एस. सी. 501; **पंजाब राज्य बनाम सुरजा राम,** ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 2413; **गिरीश यादव**

और अन्य बनाम एम. पी. राज्य, (1996) 8 एस. सी. सी. 186; और **तकदिर समसुद्दीन शेख बनाम गुजरात राज्य और अन्य,** ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 37)।

13. जहां तक मामले के मूल्यांकन का संबंध है कि जमानत मंजूर की जानी है या नहीं, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 और 439 के बीच कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं है। हालांकि, नियमानुसार न तो अग्रिम जमानत दी जा सकती है और न ही नियमित जमानत। अग्रिम जमानत एक असाधारण विशेषाधिकार होने के कारण केवल असाधारण मामलों में ही दी जानी चाहिए। अदालत को दिए गए न्यायिक विवेकाधिकार का उचित तरीके से उपयोग यह तय करने के लिए किया जाना चाहिए कि क्या यह अग्रिम जमानत देने के लिए एक उपयुक्त मामला है।

14. **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य बनाम राम कृष्ण बलोठिय और अन्य,** एआईआर 1995 एससी 1198, इस न्यायालय ने अग्रिम जमानत के अधिकार की प्रकृति पर विचार किया और इस प्रकार मत व्यक्त कियाः

> "हमें इस तर्क को स्वीकार करना मुश्किल लगता है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 अनुच्छेद 21 का एक अभिन्न अंग है। प्रथमतः पुरानी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के समान कोई उपबंध नहीं था। साथ ही अग्रिम जमानत को अधिकार के रुप में नहीं दिया जा सकता है। .....यह अनिवार्य रूप से संविधान के लागू होने के लंबे समय बाद प्रदान किया गया एक वैधानिक अधिकार है। इसे संविधान के अनुच्छेद 21 के अनिवार्य घटक के रूप में नहीं माना जा सकता और एक निश्चित विशेष श्रेणी के अपराधों पर इसे लागू न करने को अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं माना जा सकता है।"

15. उपर्युक्त मामलों का विनिश्चय करते समय, इस न्यायालय ने अग्रिम जमानत की मंजूरी के लिए एक उपबंध करने की सिफारिश करते हुए भारतीय विधि आयोग की तारीख 24 सितंबर, 1969 की 41वीं रिपोर्ट को निर्दिष्ट किया जिसमें यह मत व्यक्त किया गया है कि अग्रिम जमानत मंजूर करने की शक्ति का प्रयोग "**बहुत ही अपवादात्मक मामलों में किया जाना चाहिए। "**

16. अभियुक्तों/प्रत्यर्थियों की ओर से पेश होने वाली विद्वत अधिवक्ता सुश्री कविता झा ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रतिष्ठापित जीवन और स्वतंत्रता की अवधारणा पर बहस को जोरदार ढंग से आगे बढ़ाया है और **सिद्धराम सतलिंगप्पा मेत्रे बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य,** ए. आई. आर 2011 एस. सी. 312, में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर बहुत अधिक भरोसा किया है। और प्रस्तुत किया कि जब तक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में हिरासत में पूछताछ की आवश्यकता नहीं है, अग्रिम जमानत नहीं देना संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत किसी नागरिक/व्यक्ति को प्रदान किए गए अधिकारों से इनकार करने के बराबर है। हमें डर है कि ऊपर उल्लिखित कानून मामले का समर्थन नहीं करता है जैसा कि अभियुक्त-प्रत्यर्थियों के लिए विद्वान वकील द्वारा समर्थन किया गया है। इसके अलावा, इस न्यायालय के संविधान पीठ ने इस न्यायालय ने कर्तार सिंह बनाम पंजाब राज्य, (1994) 3 एस. सी. सी. 569, पैरा 368 में कानून का सारांश देते हुए, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

> "टाडा अधिनियम की धारा 20 (7) के तहत अधिनियम और इसके तहत बनाए गए नियमों के तहत किसी भी मामले के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के लागू होने को टाडा अधिनियम की धारा 20 (7) के तहत किसी व्यक्ति को व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता है, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित है। "

(यह भी देखेः **नार्कोटिक्स कंट्रोल ब्यूरो बनाम दिलीप प्रह्लाद नामडे** (2004) 3 एससीसी 619)।

इसलिए, हम अभियुक्त-प्रत्यर्थियों के लिए विद्वान वकील द्वारा इस तरह की प्रस्तुतियों से प्रभावित नहीं हैं।

17. **सिद्धराम सतलिंगप्पा मेत्रे** (ऊपर) में यह न्यायालय इस न्यायालय के पूर्व निर्णयों पर विचार करते हुए अग्रिम जमानत के लिए आवेदन पर विचार करते समय कुछ कारकों और मापदंडों पर विचार किया जाना चाहिएः

> "122. अग्रिम जमानत पर विचार करते समय निम्नलिखित कारकों और मापदंडों को ध्यान में रखा जा सकता हैः
>
> i. आरोप की प्रकृति और गंभीरता और अभियुक्त की सही भूमिका को गिरफ्तारी से पहले अच्छी तरह समझा जाना चाहिए।
>
> ii. आवेदक का पूर्ववृत्त, जिसमें यह तथ्य भी शामिल है कि क्या अभियुक्त ने पहले किसी संज्ञेय अपराध के संबंध में न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि पर कारावास भोगा है
>
> iii. आवेदक के न्याय से भागने की संभावना
>
> iv. अभियुक्त के समान या अन्य अपराधों को दोहराने की संभावना।
>
> v. जहां आरोप केवल आवेदक को गिरफ्तार करके उसे घायल करने या अपमानित करने के उद्देश्य से लगाए गए हैं।
>
> vi. विशेष रूप से बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित करने वाले मामलों में अग्रिम जमानत देने का प्रभाव।

vii. अदालतों को अभियुक्त के खिलाफ पूरी उपलब्ध सामग्री का बहुत सावधानी से मूल्यांकन करना चाहिए। अदालत को मामले में आरोपी की सटीक भूमिका को भी स्पष्ट रूप से समझना चाहिए। जिन मामलों में भारतीय दंड संहिता की धारा 34 और 149 की मदद से आरोपी को फंसाया गया है, अदालत को और भी अधिक सावधानी और सावधानी के साथ विचार करना चाहिए क्योंकि मामलों में अत्यधिक निहितार्थ सामान्य जानकारी और चिंता का विषय है।

viii. अग्रिम जमानत देने की प्रार्थना पर विचार करते समय, दो कारकों के बीच एक संतुलन बनाया जाना चाहिए, अर्थात् स्वतंत्र, निष्पक्ष और पूर्ण जांच पर कोई पूर्वाग्रह नहीं होना चाहिए और आरोपी के उत्पीड़न, अपमान और अनुचित हिरासत की रोकथाम होनी चाहिए।

ix. अदालत गवाह के साथ छेड़छाड़ या शिकायतकर्ता को खतरे की आशंका की उचित आशंका पर विचार करेगी;

x. अभियोजन में अल्पता पर हमेशा विचार किया जाना चाहिए और यह केवल वास्तविकता का तत्व है जिस पर जमानत मंजूर करने के मामले में विचार किया जाना चाहिए और घटनाओं के सामान्य अनुक्रम में अभियोजन की वास्तविकता के बारे में कुछ संदेह होने की स्थिति में अभियुक्त जमानत के आदेश का हकदार है।

123. गिरफ्तारी अंतिम विकल्प होना चाहिए और यह उन असाधारण मामलों तक ही सीमित होना चाहिए जहां उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में आरोपी को गिरफ्तार करना अनिवार्य है।

124. अदालत को पूरे उपलब्ध अभिलेख और विशेष रूप से उन आरोपों की सावधानीपूर्वक जांच करनी चाहिए जिन्हें सीधे आरोपी के लिए जिम्मेदार ठहराया गया है और इन आरोपों की पुष्टि अभिलेख पर अन्य सामग्री और परिस्थितियों द्वारा की गई है। .

18. गंभीर अपराध में अग्रिम जमानत देने के मानदंडों को पूरा करने की आवश्यकता होती है और आगे इस तरह की राहत देते समय, अदालत को कारणों को दर्ज करना चाहिए। अग्रिम जमानत केवल असाधारण परिस्थितियों में दी जा सकती है जहां अदालत का प्रथम दृष्टया यह विचार है कि आवेदक को अपराध में गलत तरीके से शामिल किया गया है और वह अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करेगा। (देखिएः **डी. के. गणेश बाबू बनाम पी. टी. मनोकरन और अन्य,** (2007) 4 एससीसी 434 **महाराष्ट्रा राज्य और अन्य बनाममो० साजिद हुसैन मोहम्मदएस. हुसैन और अन्य,** (2008) 1 एस. सी. सी. 212 और **भारत संघ बनाम पदम नारायण अग्रवाल और अन्य,** (2008) 13 एससीसी 305)।

19. यदि इस मामले पर उपरोक्त सुलझे हुए कानूनी प्रस्ताव के आलोक में विचार किया जाए, तो हम एक अपरिहार्य निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उच्च न्यायालय ने उपरोक्त किसी भी मानदंड को लागू नहीं किया, बल्कि एक बहुत ही गंभीर मामले को सबसे अनौपचारिक और लापरवाह तरीके से निपटाया और अभियुक्त के प्रति अयोग्य और अनुचित सहानुभूति दिखाई।

20. उच्च न्यायालय ने मामले पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं करने में गलती की और उक्त आवेदनों को इस आधार पर अनुमति दी कि प्राथमिकी में कुछ पुराने विवादों का उल्लेख किया गया था और अभियुक्त की उचित पृष्ठभूमि थी। हमारे समक्ष उच्च न्यायालय के फैसले का प्रासंगिक हिस्सा इस प्रकार हैः

"यह देखते हुए कि प्रथम सूचना रिपोर्ट में एकमात्र आरोप यह है कि मृतक और याचिकाकर्ता के बीच पहले कुछ विवाद था और उसी के कारण उनका झगड़ा हुआ था, उपरोक्त याचिकाकर्ता, जिसका उचित इतिहास है, को अग्रिम जमानत पर रिहा किया जाए। "

21. इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हमारी सुविचारित राय है कि यह अग्रिम जमानत देने के लिए उपयुक्त मामला नहीं था। उच्च न्यायालय को अपराध की प्रकृति और गंभीरता को ध्यान में रखते हुए उपरोक्त न्यायिक घोषणाओं के संदर्भ में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मापदंडों का पालन करते हुए अपने असाधारण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना चाहिए था और चूंकि प्राथमिकी अनायास दर्ज की गई थी, इसलिए इसकी सत्यता विश्वसनीय है। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को बहुत हल्के में खारिज कर दिया है कि प्राथमिकी अनायास दर्ज की गई थी और आगे कोई कारण दर्ज नहीं किया कि वैधानिक प्रावधान में शामिल पूर्व-आवश्यकता शर्तों को कैसे पूरा किया गया। न ही अदालत ने इस बात पर विचार किया कि हिरासत में पूछताछ की आवश्यकता है या नहीं।

न्यायालय कानून के स्थापित सिद्धांतों का अपमान करने में अपने विवेक का प्रयोग नहीं कर सकता है, बल्कि उसे उनका सख्ती से पालन करना होगा। विवेक को कानून द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए; विधिवत नियम द्वारा शासित और मनमाना, काल्पनिक या अस्पष्ट नहीं हो सकता है। न्यायालय को अनियंत्रित परोपकार के प्रति असमंजस की भावना के आगे नहीं झुकना चाहिए। आदेश धारा 438 आप.दंड.सं. में दिए गए आधारों को अस्वीकार करता है। यह स्वयं विवेक के गैर-अनुप्रयोग से ग्रस्त है और इसलिए, कानून की नजर में इसे बनाए नहीं रखा जा सकता है।

22. पटना के उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार द्वारा 2011 के अपराधिक विविध वाद संख्या 28318 एवं 33546 में दिनांक 19.9.2011 और 25.10.2011 को पारित

आक्षेपित निर्णय और आदेश को अपास्त किया गया है। उक्त प्रतिवादियों को दी गई अग्रिम जमानत रद्द कर दी जाती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि यदि उक्त प्रतिवादी नियमित जमानत के लिए आवेदन करते हैं, तो उस पर कानून के अनुसार विचार किया जाएगा। उपरोक्त टिप्पणियों के साथ, अपीलों का निपटारा किया जाता है।

एन.जे

अपीलों का निपटारा किया जाता है।